ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-5* Issue-10* November- 2020
Innovation The Research Concept

गुप्तोत्तर युग में नारी की आर्थिक स्थिति

Economic Status of Women in Post-Gupta Era

Paper Submission: 05/11/2020, Date of Acceptance: 19/11/2020, Date of Publication: 20/11/2020

अम्बु सिंह
पूर्व शोध छात्रा
प्राचीन इतिहास पुरातत्व व संस्कृति विभाग
दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय,
गोरखपुर (उ0प्र) भारत

सारांश

गुप्तोत्तरकाल में राजनीतिक अशांति के कारण व्यापार एवं वाणिज्य का ह्रास हुआ, जिसका प्रभाव अर्थव्यवस्था पर भी पड़ा। व्यापारिक श्रेणियों की मुहरों का अभाव तथा मुद्राओं की धातु में अशुद्धता निश्चय ही अर्थव्यवस्था में ह्रास का सूचक है जिसका प्रभाव निश्चित रुप से गुप्तोत्तर कालीन नारी जीवन पर पड़ा और उनकी आर्थिक स्थिति में गिरावट आयी। गुप्तकालीन आर्थिक गतिविधियों में नारी की विशेष सहभागिता नहीं थी। उच्चवर्ग की स्त्रियॉ तो आर्थिक उत्पादन से बिल्कुल ही अलग थी और क्रमशः मध्यम वर्ग की स्त्रियॉ भी उससे अलग होती गई केवल निम्न वर्ग की स्त्रियॉ ही अर्थोपार्जन के कार्य में संलग्न दिखायी देती हैं। इस युग में उत्तराधिकारिणी के रुप में विद्वानों का एक बड़ा वर्ग कन्या को स्वीकार करता है, किन्तु पैतृक सम्पत्ति में कन्या का सीमित स्वत्व ही स्वीकारा गया। पुनर्विवाह तथा नियोग की प्रथा बन्द होने के कारण विधवा के अधिकार को समाज में स्वीकृति मिली तथा पति की मृत्यु के बाद विधवा को सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी स्वीकार किया गया। इस युग में स्त्रीधन के सम्बन्ध में अपेक्षाकृत विकसित एवं उदार दृष्टिकोंण दिखाई देता है।

Political unrest in the post-Gupta period led to the decline of trade and commerce, which also had an impact on the economy. The lack of seals of trading categories and the impurity in the metal of currencies is certainly indicative of the deterioration in the economy, which certainly had an impact on the post-Gupta women's life and their economic condition declined. Women did not have special involvement in Gupta economic activities. The women of the upper class were completely different from economic production and respectively the women of the middle class also got separated from it, only women of the lower class appear to be engaged in the work of earning. In this era, a large section of scholars accepts the girl as heiress, but in the paternal property only the limited ownership of the girl was accepted. The rights of the widow were accepted in the society due to the practice of remarriage and the practice of employment and after the death of the husband, the widow was accepted as the heir of the property. In this age, a relatively developed and liberal view is visible in relation to women.

मुख्य शब्द : स्त्रियॉ, अशांति, विकसित, उदार, दृष्टिकोंण, अपेक्षाकृत , सर्वमान्य, उत्तराधिकारिणी, स्त्रीधन
Women, Disturbance, Developed, Generous, Visualcode, Expectant, Universally accepted, Successor, Stridhan

प्रस्तावना

गुप्तोत्तर युग में 600 ई0 से 1000 ई0 के मध्य व्यापारिक श्रेणियों की मुहरों का अभाव तथा मुद्राओं की धातु तथा उनकी बनावट में अशुद्धता एवं भद्दापन निश्चय ही तत्कालीन अर्थव्यवस्था में ह्रास का सूचक है[1]। इसका प्रभाव निश्चित रुप से गुप्तोत्तरयुगीन नारी जीवन पर भी पड़ा और उनकी आर्थिक स्थिति में गिरावट आयी। साहित्यिक साक्ष्यों के आलोक में यह कहा जा सकता है कि गुप्तोत्तरकालीन आर्थिक गतिविधियों में नारी की विशेष सहभागिता नहीं थी। स्त्री को प्रत्येक क्षेत्र में अल्प मात्रा में ही अधिकार प्राप्त थे और आर्थिक क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं था। वैदिक काल में स्त्रियॉ कृषि एवं पशुपालन में पूर्ण योगदान देकर उत्पादन में भाग लेती थी। कालान्तर में पुरुषों नें स्त्रियों को अधिकांशतः आर्थिक कार्यों एवं दायित्वों से पृथक् कर दिया। परिणामतः पुरुषों का ही आर्थिक क्षेत्र पर एकाधिकार स्थापित हो गया। उच्चवर्ग की स्त्रियॉ तो आर्थिक उत्पादन से बिल्कुल ही अलग थी और क्रमशः मध्यम वर्ग की स्त्रियॉ भी इससे अलग होती गई। सामान्यतः निम्न वर्ग की स्त्रियॉ ही

आर्थिक उत्पादन के कार्यों में संलग्न रही। निम्नवर्गीय स्त्रियॉ कृषि कार्य में पर्याप्त योगदान देती थी। कालिदास के रघुवंश में संकेत मिलता है कि स्त्रियॉ खेतों की रखवाली का काम करती थी। तद्युगीन समाज में स्त्रियों ने श्रमिक के रुप में आर्थिक कार्यों में विशेष योगदान दिया।

निम्न जाति की स्त्रियॉ कुटीर उद्योगों में अपने पति की सहायिका के रुप में कार्य करती थी। विष्णु के अनुसार नटकार, सुराकार, आखेटक, चरवाहे, धोबी आदि की पत्नियॉ यदि किसी से किसी प्रकार का कर्ज लेती थी तो वह कर्ज उनके पति को देना पड़ता था, क्योंकि वे अपने पति के कुटीर उद्योग में उनकी सहायता करती थी[–2]। कादम्बरी में भी चॅवर डुलाने वाली प्रतिहारी और ताम्बूल करंक वाहिनी सेविकाओं का उल्लेख है[–3]। समयमातृका में वर्णित है कि स्त्रियॉ दुकान चलाने का कार्य करती थी[–4]। कुछ स्त्रियॉ सैनिक वेश धारण कर अन्तःपुरों की रक्षा का कार्य करती थी। कतिपय स्त्रियॉ गुप्तचरी में संलग्न रहती थी। कथासरित्सागर में एक स्थान पर स्त्री गुप्तचर का उल्लेख मिलता है। सेना के प्रयाण के समय कुछ युवती स्त्रियॉ भी रहती थी। कामन्दकीय नीतिसार में स्त्रियों को कर्मचारिणी नियुक्त करने की बात की गयी है[–5]। दासी, धात्री, गणिका, स्त्री, गुप्तचर, शैलूषी, वेश्या, गोपी, नटी, किराती, शबूरी, नर्तकी जैसी स्त्रियों के उल्लेख यह संकेत करते हैं कि जीविकोपार्जन के लिए स्त्रियॉ नाना प्रकार के उचित अनुचित व्यवसायों में संलग्न होती थी।

नारियों की आर्थिक सुरक्षा को दृष्टि में रखकर हिन्दू समाज में धीरे–धीरे उनका सम्पत्ति विषयक अधिकार स्वीकार किया गया। समकालीन साहित्य में कन्या के साम्पत्तिक अधिकार सम्बन्धी अनेक सन्दर्भ प्राप्त होते हैं। शुक्रनीतिसार में पिता की जीवितावस्था में विभाजन की स्थिति में कन्या को पुत्रों से आधा देने का विधान किया गया है किन्तु यदि विभाजन पिता के मरने पर होता है तो कन्या को अष्टमभाग ही प्राप्त होना चाहिए[–6]। जीमूतवाहन ने दायभाग[–7] में विधान किया है कि अपुत्रक व्यक्ति के सम्पत्ति की अधिकारिणी कुमारी कन्या है, किन्तु उसके अभाव में वह सम्पत्ति विवाहित कन्या को प्राप्त होनी चाहिए। विज्ञानेश्वर ने लिखा है कि विवाहित और अविवाहित, निर्धन व धनी, पुत्रवती और अपुत्रक कन्या में साम्पत्तिक उत्तराधिकार के लिए विवाद उत्पन्न हो तो विवाहित, निर्धन व पुत्रवती को प्रथम वरीयता प्राप्त होनी चाहिए [–8]। देवण्णभट्ट, चण्डेश्वर, वाचस्पति मिश्र, रघुनन्दन आदि ने कन्या के लिये सम्पत्ति के चतुर्थ भाग का विधान कन्या के विवाह खर्च के लिए उचित माना है। अपरार्क ने भी इस मत का समर्थन किया है[–9]। कात्यायन ने भी पुत्र के अभाव में पुत्री के उत्तराधिकारी होने का मत प्रतिपादित किया है[–10]। कन्या के सम्पत्ति विषयक अधिकार के सम्बन्ध में अलबरुनी लिखता है कि स्त्रियॉ केवल पुत्री को छोड़कर सम्पत्ति की अधिकारी नहीं है। सम्भवतः कन्या को हिस्सा देने के पीछे हिन्दू व्यवस्थाकारों की दृष्टि उसके विवाह को सुचारु रुप से सम्पन्न करने की थी[–11]।

विवाहित कन्याओं की स्थिति अविवाहित कन्याओं से नितान्त भिन्न थी। विवाहित स्त्रियों को विवाह के समय पिता पर्याप्त धन देते थे। पति–गृह जाकर वहॉ भी ये स्त्रीधन की स्वामिनी थी। अतः दायाधिकार न होने पर भी उन्हें पैतृक सम्पत्ति का एक अंश प्राप्त हो जाता था। दूसरी ओर अविवाहित कन्या न तो दहेज पाती थी न ही पति का धन। ऐसी स्थिति में उसे पिता का अंशहर बनाना सर्वथा न्याय संगत था। किन्तु उक्त मत के पोषकों की संख्या बहुत अधिक नहीं थी। पुरानी परम्परा का अनुसरण करने वाले सामान्यतः स्त्रियों को दायाद नहीं मानते थे[–12]। उनके अनुसार मात्र अभ्रातृमती कन्या को ही रिक्थहर बनाया जा सकता है। मनु ने किसी भाई के मर जाने अथवा सन्यासी हो जाने पर उसके हिस्से को भी भाइयों एवं बहनों में समान रुप से विभक्त करने का विधान किया है। उन्होने भाईयों के साथ बहनों को भी मातृक दाय का अंशहर माना है। डा0 के0पी0 जायसवाल ने इस व्यवस्था का मूल कारण कन्याओं के प्रति मनु का स्नेहभाव मानते हैं।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि गुप्तोत्तर काल में स्त्रियों की आर्थिक सम्पत्ति के उत्तराधिकारिणी के रुप में विद्वानों का एक बड़ा वर्ग कन्या को स्वीकार करता है, किन्तु प्रायः भारत के अधिकांश भागों में पैतृक सम्पत्ति में कन्या का सीमित स्वत्व ही स्वीकारा गया। सीमित स्वत्व का अर्थ है कि कन्या उस सम्पत्ति का जीवन पर्यन्त उपभोग कर सकती है, किन्तु उसकी मृत्यु के उपरान्त वह सम्पत्ति उसके पिता के दायादों को मिलेगी न कि कन्या के दायादों को।

सम्पत्ति के विषय में पुरुष सन्तान के अतिरिक्त अन्य उत्तराधिकारिणी में प्रथम स्थान विधवा पत्नी को दिया गया है[–13]। प्रारम्भ में पुनर्विवाह और नियोग के प्रचलन के कारण विधवाओं की संख्या अत्यन्त न्यून थी, किन्तु इन प्रथाओं में विलोप से कालान्तर में विधवाओं की संख्या में अभिवृद्धि हुई। प्रारम्भ में कुछ समय तक इनके साम्पत्तिक अधिकारों की उपेक्षा की गयी। आपस्तम्ब, वशिष्ठ, बौधायन, मनु और देवल ने विधवा को मृत पति की सम्पत्ति का उत्तराधिकारिणी नहीं माना[–14]।

हिन्दू विधवाओं को पुत्रों के अभाव में सम्पत्ति का उत्तराधिकारिणी मानने का सर्वप्रथम श्रेय याज्ञवल्क को है। यदि कन्याओं को अपने रिक्थाधिकार के लिए कौटिल्य के प्रति आभारी होना चाहिए तो विधवाओं को याज्ञवल्क के प्रति। लक्ष्मीधर एवं जीमूतवाहन के अनुसार निःसंतान विधवा को अपने पति की सम्पत्ति पाने का अधिकार है। अलबरुनी के अनुसार यदि मृत व्यक्ति का कोई उत्तराधिकारी है तो भी विधवा जब तक जीवित रहती है तब तक भोजन और वस्त्र देना पड़ता है। स्मृतिचंद्रिका में कात्यायन के नाम से उद्धृत एक श्लोक में कहा गया है कि कुल की रक्षा करने वाली स्त्री को पति के मरणोपरान्त उसके पति का अंश मिलना चाहिए, किन्तु उसके दान, विक्रय अथवा गिरवी रखने का उसे अधिकार नहीं है[–15]।

स्पष्ट है कि गुप्तोत्तर युग में विधवाओं के साम्पत्तिक अधिकारों में विकास परिलक्षित होने लगा। विज्ञानेश्वर ने मिताक्षरा में सदाचारिणी विधवा को पुत्रहीन

मृत पति की सम्पूर्ण सम्पत्ति का उत्तराधिकारिणी माना है। इस तरह दायभाग में विधवा को अपेक्षाकृत अधिक विस्तृत अधिकार प्रदान किया गया है। गुप्तोत्तर काल में नारी के प्रति सहानुभूति का वातावरण दिखाई देता है। इस काल में विचारकों का एक ऐसा वर्ग विकसित हुआ जिसने नारी के सम्पत्तिक अधिकारों का समर्थन किया तथा नारी के प्रति अत्यन्त उद्धार एवं संवेदनशील मत की अभिव्यंजना की। नारियों के उत्तराधिकार सम्बन्धी अधिकार का कोई सर्वमान्य नियम नहीं था। सामान्यतः पिता की मृत्यु के उपरान्त पुत्रों को ही उत्तराधिकार प्राप्त होता था क्योंकि कन्यायें विवाहोपरान्त अपने ससुराल चली जाती थी। किन्तु ऐसी कन्यायें जो अविवाहित थी तथा परिवार में जो विधवायें थी, वे साम्पत्तिक अधिकार से वंचित नहीं थी। ऐसी कन्याओं का उल्लेख भी प्राप्त होता है जो अपने पिता के साथ रहती थी। ऐसी कन्याये साम्पत्तिक विभाजन के अवसर पर समान अंशप्राप्त करती थी। स्पष्टतः विधवायें एवं अविवाहित कन्यायें साम्पत्तिक अधिकार से वंचित न थी।

भारत में प्राचीनकाल से ही स्त्रीधन की अवधारणा मिलती है। सर हेनरी मेन का मत है कि हिन्दुओं में विवाहित स्त्री की वह सुरक्षित सम्पत्ति जिसका पति अपहार नहीं कर सकता था स्त्रीधन के नाम से प्रसिद्ध था। मनु के अनुसार जो विवाह के समय अग्नि के सम्मुख कन्या को दिया जाता है वह स्त्रीधन कहलाता है[–16]। विवेच्ययुगीन भाष्यकार विज्ञानेश्वर ने स्त्रीधन को कम से कम छह प्रकार का बताया है – पिता, माता, भ्राता और पति द्वारा दिया हुआ, अग्नि की सन्निधि में विवाह के समय कन्यादान के साथ प्राप्त धन तथा अधिवेदन के निमित्त मिला हुआ धन। यही नही विवाह के होने के पश्चात प्रीतिपूर्वक सास–श्वसुर आदि से पादवन्दनादि प्रथा में स्त्री को जो धन प्राप्त प्राप्त होता है, वह भी स्त्रीधन था—[17]। सम्पत्ति विभाजन के समय पत्नी या माता का पुत्र के समान अंश भाईयों के अंश के चतुर्थांश आदि को भी अपरार्क ने स्त्रीधन के अन्तर्गत उल्लिखित किया है। वस्तुतः पति द्वारा पत्नी को दी गयी तथा उत्तराधिकार में उसे मिली हुई चल सम्पत्ति भी स्त्रीधन के अन्तर्गत थी। स्त्रीधन के अन्तर्गत अधिकांशतः स्त्री के मूल्यवान आभूषण भी होते थे, जिनका वह स्वंय उपयोग करती थी। स्त्रीधन में स्त्री को विवाह के पूर्व, विवाह के अवसर पर, स्नेहवश देय धन भ्राता द्वारा प्राप्त धन, माता द्वारा प्राप्त धन पिता द्वारा प्राप्त धन शामिल था।

पति के मरने के पश्चात नारी को उसके स्त्रीधन से वंचित न करने का निर्देश मनु द्वारा दिया गया है—[18]। कात्यायन ने यह मत व्यक्त किया है कि स्त्री अपने स्त्रीधन के साथ अचल सम्पत्ति को भी बन्धक रख सकती अथवा बेच सकती है। जीमूतवाहन ने दायभाग में कात्यायन का मत उद्धृत किया है, जिसके अनुसार 'सौदायिक' (स्नेहियों से प्राप्त धन) पर स्त्रियों का स्वातन्त्रय अभीप्सित है क्योंकि वह इसलिये मिलता है कि वह संकट की स्थिति में अपना भरण–पोषण कर सके और नृशंस (कठोर या दयनीय) अवस्था को न प्राप्त हो। सौदायिक स्त्रीधन के ग्रहण अथवा दान में पति, पुत्र, पिता, भाई किसी को अधिकार नहीं था—[19]। धर्मशास्त्रकारों ने स्त्रीधन के उपयोग पर प्रायः प्रतिबन्ध लगाया तथा किन्हीं विशेष परिस्थितियों में ही पति द्वारा उसके उपयोग की बात कही है। जैसे दुर्भिक्ष धर्मकार्य, व्याधि अथवा जेल जाने की परिस्थिति में इसे अन्य अनेक मध्यकालीन भाष्यकारों ने भी स्वीकार किया है। स्त्री का स्नेह वात्सल्य साधारणतः पुत्री के प्रति ही अधिक होता है इसलिए शास्त्रकारों ने स्त्रीधन की अधिकारिणी पुत्री को ही बताया है। स्त्रीधन के उपभोग तथा स्त्रीधन पर स्त्री के स्वामित्व का सर्वप्रथम उल्लेख कौटिल्य ने किया है। कौटिल्य के अनुसार पति के विदेश गमन पर और तदुपरान्त पत्नी के लिए कोई विशिष्ट व्यवस्था न होने पर पारिवारिक रुग्णता में, दुर्भिक्षकाल में, भयकाल में तथा धर्मकार्य में स्त्रीधन का उपयोग कर सकती है। दो सन्तानों के जन्म के पश्चात् पति पत्नी दोनो उस धन का उपयोग कर सकते हैं। सन्तानरहित होने पर भी तीन वर्ष बाद दोनो उस धन का उपयोग कर सकते थे। यह नियम प्रशस्त विधि से विवाहित स्त्रियों के लिये मान्य था। गान्धर्व या आसुर विधि से विवाहित स्त्री के स्त्रीधन का उपयोग यदि पति करता है तो उसे ब्याज सहित मूलधन वापस करना पड़ता था। पैशाच एवं राक्षस विधि से विवाहित स्त्री के स्त्रीधन का उपयोग यदि पति करता है तो उसे चोरी का दण्ड प्राप्त होना चाहिए।

स्पष्ट है कि प्रशस्त विधि से विवाहित स्त्रियॉ स्त्रीधन पर एकाकी अधिकार नहीं रखती थी। पति भी विशिष्ट परिस्थितियों मे ही स्त्रीधन का व्यय कर सकता था, जबकि प्रशस्त विधि से विवाहित स्त्री का स्त्रीधन पर पूर्ण अधिकार रहता था। किन्तु व्यभिचारिणी स्त्रियों को कौटिल्य ने स्त्रीधन से वंचित रखा है[–20]। मनु के अनुसार यदि बान्धव मोहवश स्त्री के धन, वाहन या वस्त्र का उपयोग करते हैं, तो वे अधोगति प्राप्त करते हैं।

सौदायिक स्त्रीधन पर स्त्री का पूर्ण प्रभुत्व होता था तथा असौदायिक स्त्रीधन पर स्त्री का प्रभुत्व उसके पति द्वारा नियन्त्रित होता था। सौदायिक स्त्रीधन पर स्त्रियों का स्वतन्त्र अधिकार इसलिये रहता था क्योंकि वह उसके सगे सम्बन्धियों द्वारा इसलिये दी जाती थी कि वे दुर्दशा को न प्राप्त हो सकें। इस सम्पत्ति के विक्रय अथवा दान का स्त्रियों को पूर्ण अधिकार था। विधवा हो जाने पर वह पति द्वारा दिये गये 'चल भेटों' को मनोनुकूल व्यय कर सकती थी। पति, पुत्र, पिता तथा भ्राता किसी को भी सौदायिक स्त्रीधन को व्यय करने अथवा विघटित करने का अधिकार नहीं था। कात्यायन के अनुसार हिन्दू स्त्री सौदायिक स्त्रीधन का मनोनुकूल व्यय कर सकती थी। याज्ञवल्क के अनुसार यदि पति पत्नी का स्त्रीधन किसी आपत्तिकाल में ग्रहण करता है तो उसे वापस करना उसके लिये अनिवार्य है।

स्त्रीधन के उत्तराधिकार के लिए वरीयता पुत्री को ही दी गयी है। मिताक्षरा[–21] में कहा गया है कि पुरुष का अंश अधिक होने से पुत्र तथा स्त्री का अंश अधिक होने से पुत्री उत्पन्न होती है। अतः पुरुष का धन पुत्र को और स्त्री का धन पुत्री को मिलना चाहिए। वृहस्पति के अनुसार स्त्रीधन अविवाहित पुत्र तथा पुत्रियों को प्राप्त होना चाहिए। विवाहित पुत्रियों को कुछ धनादि (1/4) भाग संतोषार्थ देना चाहिए। इस सन्दर्भ में नारद और

याज्ञवल्क का विचार है कि माता की सम्पत्ति पुत्री को तथा उसके अभाव में ही पुत्र को मिलनी चाहिए। याज्ञवल्क के अनुसार माता की सम्पत्ति पुत्री को प्राप्त होती है परन्तु यदि स्त्री सन्तानहीन है तो सम्पत्ति पर पति का तथा अन्य दशाओं में (राक्षस पैशाच विधि से विवाहित स्त्री) पिता का अधिकार होता है। कात्यायन ने स्त्रीधन के उत्तराधिकार का विस्तृत विवेचन करते हुये यह कहा है कि स्त्रीधन की उत्तराधिकारिणी अविवाहित लड़कियॉ है उनके अभाव में जीवित पति वाली विवाहित कन्यायें अपने भाइयों के साथ दायाद बनती हैं किन्तु पुत्रियों के न होने पर स्त्रीधन मृतक स्त्री के पुत्रों को प्राप्त होता था।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के अध्ययन का उद्देश्य गुप्तोत्तर कालीन नारियों की आर्थिक स्थिति के माध्यम से तद्युगीन आर्थिक स्थिति की जानकारी प्राप्त करना है क्योंकि किसी भी समाज की वास्तविक स्थिति का मूल्यांकन उस समय की नारियों की स्थिति को देखकर ही पता चलता है। नारी यदि आर्थिक दृष्टि से सक्षम और सशक्त है तो उस समय का समाज भी अवश्य ही आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न होगा क्योंकि नारी ही सामाजिक दृष्टिकोंण से विकास के अन्तिम पायदान पर होती है। यद्यपि गुप्तोत्तर युग में नारी की आर्थिक स्थिति में गिरावट दिखायी देती है तथापि निम्न वर्ग की स्त्रियॉ अर्थोपार्जन में संलग्न दिखायी देती है तथा इस युग में कन्या और विधवा के आर्थिक अधिकार को भी स्वीकार किया गया और स्त्रीधन के सम्बन्ध में भी अपेक्षाकृत उदार दृष्टिकोंण दिखायी देता है।

निष्कर्ष

अतः कहा जा सकता है कि स्त्री के विपत्ति और दुर्दिनकाल में जब उसके समस्त सम्बन्धी और सहायक उसे निराश्रित छोड़ देते थे, ऐसे समय में उसके जीवन का संचालन उसके स्त्रीधन से ही होता था। गुप्तोत्तरकाल में स्त्रीधन के सम्बन्ध में अपेक्षाकृत विकसित एवं उदार दृष्टिकोंण दिखायी देता है। कदाचित् स्त्रीधन प्रागैतिहासिक युग से ही भारत में प्रचलित था। प्रारम्भ में सम्भवतः स्त्रीधन कन्या के मूल्य के रुप में रहा होगा। गुप्तोत्तर काल में मिताक्षरा द्वारा प्रतिपादित नियम इस सम्बन्ध में सर्वाधिक उदार दिखायी देते हैं। स्त्रीधन की सीमा, स्वामित्व एवं उत्तराधिकार के सम्बन्ध में यद्यपि दायभाग एवं मिताक्षरा में बहुत अधिक अन्तर नहीं है तथापि मिताक्षरा को उदार मात्र इसलिए कहा गया है कि इसमें व्यभिचारिणी पुत्री को भी स्त्रीधन का उत्तराधिकारी माना गया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *यादव बी0एन0एस0 सोसायटी एण्ड कल्चर इन नार्दर्न इण्डिया पृ0 141*
2. *विष्णु 6.37*
3. *कादम्बरी, पृ0 45*
4. *समयमातृका, 2.45*
5. *कामन्दकीय नीतिसार, 7.44*
6. *शुक्रनीतिसार, पृ0 4/5/229–30*
7. *दायभाग, पृ0 154*
8. *मिताक्षरा 20/135–36*
9. *अपरार्क, 2, पृ0 124*
10. *कात्यायन, याज्ञवल्क, 2.136/6*
11. *स्मृतिचन्द्रिका, व्यवहारकाण्ड, पृ0 625*
12. *यास्क निरुक्त 3/4*
13. *काणे पी0वी, धर्मशास्त्र का इतिहास, द्वितीय भाग, तृतीय खण्ड, पृ0–906*
14. *आपस्तम्ब धर्मसूत्र 2/14/2–5, बौधायन धर्मसूत्र 1/5/113–14, मनुस्मृति 9/185–18*
15. *स्मृतिचन्द्रिका, पृ0 292*
16. *मनुस्मृति, 9 पृ0 274, 18 पृ0 37*
17. *मनुस्मृति, 9 पृ0 274, 18 पृ0 37*
18. *मनुस्मृति, 3.52*
19. *दायभाग सौदायिक..... स्थावरेण्वपि*
20. *अर्थशास्त्र, 3,3,44*
21. *मिताक्षरा, 2,117*